International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR)
Peer Reviewed Bi-Monthly

ISSN – 2347-7075
Impact Factor – 7.065
Vol.8 No.1 Sept – Oct 2020

समकालीन आदिवासी कविता - दशा एवं दिशा

Bagwan Niyajoddin Shahajahan
Head Dapt Of Hindi
Uma Mahavidyalaya Pandharpur, Dist- Solapur, 413304(Ms)
Email-niyajoddinbagwan@gmail.com

शोध सारांश :

आदिवासी जीवन दर्शन की यथार्थ अभिव्यक्ति उनकी मौखिक परम्परा में मौजूद है। समकालीन कविता आदिवासियों के समग्र जीवन को विभिन्न भाषाओं के माध्यम से अभिव्यक्ति कर रही है। वर्तमान औद्योगीकरण ने आदिवासी समाज के सामने कई समस्याएँ खड़ी की है। जिससे आदिवासी विस्थापन, पलायन एवं शोषण के चक्रव्यूह में फँस गये है। समकालीन कविता आदिवासियों की इन विभिन्न समस्याओं को विभिन्न भाषाओं के माध्यम से अभिव्यक्ति करती है। वहीं दूसरी ओर आदिवासी संस्कृति के मानवतावादी मूल्यों को भी उजागर करती है। निश्चित रूप से समकालीन कविता आदिवासी जीवन को शोषण से मुक्त करके एक आदर्श समाज बनाने में सफल होगी।

मुख्य शब्द : आदिवासी कविता, मौखिक परम्परा, विस्थापन, शोषण।

प्रस्तावना :

समकालीन हिंदी साहित्य स्त्री और दलित विमर्श को विकसित कर रहा है और हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श सबसे नया विमर्श है। इससे पहले भी आदिवासी के जीवन पर साहित्य लिखा गया है,लेकिन पिछले ढाई दशकों से उदारीकरण और वैश्वीकरण ने आदिवासियों के जीवन में राष्ट्रीय कंपनियों के हस्तक्षेप बढ़ गया है और इसके कारण उनके जंगल और जमीन से संबंधित पारंपरिक अधिकारों का अतिक्रमण शुरू हुआ। इसने आदिवासी क्षेत्रों में संघर्ष को तेज किया और इस संघर्ष में राजसत्ता एवं प्रशासन का हस्तक्षेप बहुराष्ट्रीय कंपनियों एवं कॉरपोरेट्स के पक्ष में तथा आदिवासियों के विरुद्ध रहा है। जिसके कारण आदिवासियों के सामने अस्तित्व एवं अस्मिता का विकट प्रश्न निर्माण हुआ है। यदि वे अपनी सांस्कृतिक पहचान को अहमियत देते हैं, तो उनका अस्तित्व खतरे में आ सकता है और अगर वे अपने अस्तित्व को प्राथमिकता देते हैं, तो उनकी सांस्कृतिक पहचान खतरे में आ सकती हैं। यही वह पृष्ठभूमि है जिसमें आदिवासियों की अस्तित्व एवं अस्मितागत बेचैनी ने एक पृथक एवं स्वतंत्र धारा के रूप में आदिवासी विमर्श की संभावनाओं को बल प्रदान किया है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1)आदिवासी अस्मिता को बृहत्तर समाज से काटकर देखने की बजाय शोषित, उत्पीड़ित वर्ग और शोषक वर्ग के बीच चले आ रहे पारंपरिक संघर्ष के रूप में देखा है।

2) आदिवासियों के संघर्ष को एक व्यापक संघर्ष के रुप में देखा गया है।

वर्तमान समय में देश के विभिन्न भागों में आदिवासी साहित्यकार अपनी-अपनी भाषा में अपने समाज की भावनाओं की अभिव्यक्ति कर रहे हैं। इन कवियों ने आदिवसी विमर्श के स्वर को एक नई दिशा दी है। हिन्दी भाषा में प्रसिद्ध चिन्तक हरिराम मीणा, डा.. रामदयाल मुण्डा, महादेव टोम्पों, हजारी लाल मीणा 'राही', निर्मला पुतुल, सहदेव सोरी, मीरा राम निवास, मोतीलाल, शंकरलाल मीणा, सरिता सिंह बडाइक, सोना सिंह पुजारी, रोज केरकेटा एवं ग्रेस कुजुर आदि आदिवासी रचनाकारों ने अपनी कविता में आदिवासियों की भावनाओं को मुखरित किया हैं। समकालीन आदिवासी कविता में विस्थापन के दर्द को लेकर बहुत लिखा जा रहा है। औद्योगीकरण और

विकास के नाम पर आदिवासियों को अपने खेत, जंगल-जमीन देनी पड़ी। औद्योगीकरण में आदिवासी बाधक होने लगे जिसके कारण उन्हे विस्थापित किया गया। विस्थापन की पीड़ा और दर्द पर रमणिका गुप्ता लिखती हैं कि ''विकास के नाम पर बरती गई नीतियों के कारण अपनी जमीनों, जंगलों, संसाधनों व गाँवों से ही बेदखल नहीं हुए बल्कि उनके मूल्यों, नैतिक अवधारणाओं, जीवन-शैलियों, भाषाओं एवं संस्कृति से भी बेदखल हो गये।''[1]

आदिवासी क्षेत्रों मे पूँजीपतियों की शिरकत एक मुख्य समस्या बन गयी है, जिसके कारण आदिवासी जीवन शैली प्रदूषित हो गयी और अन्ततः आदिवासीयों का अस्तित्व ही संकट में आ गया, जिसके बारे में कवयित्री ग्रेस कुजूर अपनी कविता में लिखती हैं कि-

''हे संगी क्यों घूमते हो/ झुलाते हुए खाली
गुलेल क्या तुम्हे अपनी धरती की/ सेंधमारी
सुनायी नहीं दे रही ''[2]

औद्योगीकरण के कारण हजारों वर्षों से सुरक्षित रही प्राकृतिक सम्पदा उजड़ रही है। जंगल प्राकृतिक सम्पदा से रहित भाँय-भाँय कर रहे है। पेड़ों पर पंक्षी नहीं दिखाई देते और न ही नदियों में मछलियाँ। इसको देखकर कवयित्री का मन विद्रोहित होता है, और वह कहती है कि

''संगी रे न जाने कौन से देश उड़े/
क्षितिज के पार वे/
हरे खेतों में विचरते बगुले/
नहीं खेलती झूमर अब/
'डोभा' के पानी में /
गीतू और 'बुदु' मछलियां/फंसने लगे हैं क्यों/
'कुमनी' में/ 'ढोद' बहुत दुमुंहे ?/
और बार-बार फिसलने लगी है क्यों,/
हथेलियों से जिन्दगी यहाँ/ मांगुर की तरह? ''[3]

आदिवासी जीवन प्रकृति पर निर्भर है। प्राकृतिक संसाधनो के अभाव में उनके जीवन की कल्पना भी असम्भव है, प्रकृति एवं अन्य प्राकृतिक संसाधनों के साथ छेडछाड़ आदिवासियों के लिए आत्यन्यिक पीड़ा की बात है।

'संथाली' कविता में इसके विषय में कहा गया हैं-

"ढह गई पहाड़ी /भसकी छोटी पहाड़ी/
उल्टी पुल्टी हो गई दुनिया/ ओ मेरे भाई ...
/तो ठीक नहीं तो/ हमें सौंपा है हमें पूर्वजों
ने/ धन संपदा से संपन्न। अपना राज्य
मानवता से परिपूर्ण।"[4]

आदिवासी अपने आदिम स्वभाव से ही बहुत सीधे व भोले होते हैं वह हर तरह मैल-वंचित रहे हैं। वे पूँजीपतियों की उन साजिशों को नहीं समझते जो उनके विरूद्ध पनपती जा रही हैं। समकालीन आदिवासी कविता इन साजिशों को पहचानने लगी है। कवयित्री निर्मला पुतुल लिखती हैं-

" इन खतरनाक शहरी जानवरों को पहचानों
चुडका सोरेन
तूम्हारे भोलेपन की ओट में
इस पेचदार दुनिया में रहते
तुम इतने सीधे क्यों हो चुड़का सोरेन ?"[5]

निष्कर्ष :

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि समकालीन कविता में आदिवासी जीवन के विभिन्न पक्षों का चित्रण किया गया है। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था का आदिवासियों पर बड़ा ही दूर-गामी प्रभाव पड़ा है। आदिवासी कवि समकालीन कविता में अपने परिवेश की बात को अपनी भाषा में अभिव्यक्त कर रहा हैं। आदिवासी कविता की भाषा भी उनके अंचलों से जुड़ी है। आदिवासी साहित्यकार आदिवासी जीवन शैली के विविध अवयव यथा-रूढ़ि परंपरा, लोकगीत,संगीत के साथ ही नदी, पेड़, पौधे, जंगली जानवर, पहाड़ खेती एवं समृद्ध संस्कृति को अपनी कविता के माध्यम से अभिव्यक्त कर उनका महत्व स्थापित करते हैं। आदिवासी समाज न कभी गुलाम बना है न बनेगा, इसके बाद भी सभ्य समाज ने उनके साथ छल किया। समकालीन कविता में आदिवासियों के प्रकृति संरक्षण को बहुत महत्व दिया जा रहा है। वे उनके समाज के मानवीय मूल्यों को आधुनिक समाज के मूल्यों से जोड़ा जा रहा है। जिससे सभ्य समाज उनके उपयोगी मूल्यों से लाभान्वित हो सके।

सन्दर्भ

1) गुप्ता रमणिका (सं.) आदिवासी विकास से विस्थापन, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण-2018, पृष्ठ-01

2) गुप्ता रमणिका (सं.) आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन नई ,दिल्ली, संस्करण-2002, आवृत्ति-2017, पृष्ठ-22

3) गुप्ता रमणिका (सं.) आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन नई ,दिल्ली, संस्करण-2002, आवृत्ति-2017, पृष्ठ-22

4) मीणा हरिराम, आदिवासी दुनिया, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत संस्करण- 2013 आवृत्ति-2016, पृष्ठ-201

5) ग्रेस कुजूर की कविता 'हे समय के पहरेदारों' शीर्षक कविता से, गुप्ता रमणिका (सं.) आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण-2002, आवृत्ति-2017, पृष्ठ-24